ध्यान

भाग - १

'ध्यान' शब्द का अर्थ है किसी वस्तु पर वृत्तियों को **एकाग्र करना** अर्थात **चारों ओर से मन को रोक कर एक विषय पर टिकाने की क्रिया ।**

हम किसी वस्तु को देखते हैं या कुछ सुनते हैं तो हमारा **'ध्यान'**, उस ओर आकर्षित हो जाता है ।

यह **'ध्यान' मायिकी मण्डल में** मन के कई स्तरों पर ज्ञान इन्द्रियों के माध्यम से प्रवृत्त होता है, जैसे —

1. दृश्यमान वस्तुओं की ओर
2. अपने **'शरीर'** की ओर
3. मानसिक **'रुचियों'** की ओर
4. दिमागी **'भावनाओं'** की ओर
5. संस्कारिक **'रंगत'** की ओर
6. धार्मिक रुचियों की ओर

प्रत्येक जीव के **मन की 'रंगत' भिन्न-भिन्न** होती है । इसी कारण जो चीज एक व्यक्ति को अच्छी लगती है, दूसरे को अच्छी नहीं लगती या बुरी लगती है ।

हमारे **मन की 'रंगत'** हमारे ख्यालों तथा कर्मों की **'रंगत' अनुसार बनती है ।** ज्यों ज्यों इन ख्यालों को बार-बार **दोहराते** हैं, त्यों-

त्यों इन ख्यालों का **'प्रभाव'** हमारे मन के अन्दर —

धँस

बस

समा

कर **प्रबल होता जाता है ।**

इस प्रकार हमारे —

ख्याल

विचार

भाव

रुचियाँ

रुझान

स्वाद

ज्ञान

मनोभाव

धारणाएँ

भावनाएँ

श्रद्धा

स्वभाव

कर्म

धर्म

आचरण

मार्गदर्शन

अन्त : करण

जीवन

भाग्य

बनते तथा बदलते रहते हैं ।

उदाहरण के रूप में जब हम बाजार में से गुजरते हैं, तब हमारी नज़रों के सामने अनेक वस्तुएं तथा व्यक्ति आते हैं। इन में से हमारा **'ध्यान'** केवल उन्हीं की ओर **आकर्षित होता है** जिन्हें हम जानते हों या जिन में हमारी **रुचि हो**। अन्य सभी दृश्य **अनजाने ही हमारी नज़रो से गुजर जाते हैं तथा वैसे ही भूल जाते हैं।**

हम अपनी रुचियों के अनुसार ही ख्यालों को —

महत्व देते हैं
बार -बार सेचते हैं
दोहराते हैं
उन्हें दृढ करते हैं
उनके आदि होते हैं
अभ्यास करते हैं
अपनाते हैं
मूर्तिमान करते हैं।

दूसरे शब्दों में, **'ख्यालों' को साक्षात करने के लिए** —

दिलचस्पी
एकाग्रता
ध्यान
रुचि
लगन
अभ्यास
दृढता

अनिवार्य है तथा इनकी **तीव्रता, लगन तथा दृढ़ता अनुसार ही परिणाम निकलते हैं।**

परन्तु यह **लगन, एकाग्रता तथा दृढ़ता भी प्रत्येक जीव के मानसिक संस्कारों तथा भावनाओं अनुसार अलग-अलग श्रेणी की होती है ।**

दूसरे शब्दों में जितनी तीव्र **लगन तथा दृढ़ता से** हम किसी ख्याल का **एकाग्र चित्त 'ध्यान' तथा अभ्यास करते हैं** उतनी ही शीघ्र वह ख्याल **साक्षात मूर्तिमान हो जाता है ।** यह **नियम** हमारे जीवन के हर पक्ष अथवा —

शिक्षा में
व्यापार में
नौकरी में
कारीगरी में
कला में
राग-विद्या में
खोज में
स्वास्थ्य में
सेवा में
धर्म में
भजन में
योग में
आध्यात्मिकता में

लागू होता है ।

किसी एक बात को —

याद करने
सोचने

दोहराने

रटन करने

अभ्यास

करने से उस **'ख्याल' में 'शक्ति' पैदा हो जाती है ।**

ऐसी दशा में यदि हम उस ख्याल से **तंग भी हो जायें** तथा दुखी होकर उसे **छोड़ना भी चाहें** — तो भी उस **दृढ़ हुए ख्याल** अथवा **हानिकारक रुचि से पीछा नहीं छुड़ा सकते,** क्योकि वह हमारे **मन की 'रंगत' बन कर, हमारे अन्तःकरण की गहराईओं में उतर जाती है ।**

हमारे मन की **'सम्पूर्ण रंगत'** अनुसार ही हमारे मन की —

निर्णय शक्ति

कसौटी

चयन

जीवन-दिशा

अन्तःकरण की रंगत

बनती रहती है ।

इस स्वयं रचित 'कसौटी' या अन्तःकरण की रंगत अनुसार ही हम बाहरी 'वातावरण' तथा अन्दरूनी मानसिक 'भड़ास' का 'प्रभाव' ग्रहण करते हैं । इसी **'प्रभाव'** अनुसार ही हमारी **'जीवन दिशा', 'व्यक्तित्व' तथा 'भाग्य' बनता है ।**

इसी अन्तःकरण की रंगत अनुसार ही हमारे मन की —

दिलचस्पी

ध्यान

तीव्रता

रुचि

स्वभाव

आचरण

व्यवहार

व्यक्तित्व

का प्रकटाव होता है ।

बाहर के वातावरण तथा अन्दरूनी अन्तःकरण की **मिली-जुली 'भड़ास'** से ही हमारे ख्यालों की **'रंगत' अथवा 'रुचियाँ' बनती हैं** — जिस अनुसार हमारा **ध्यान उन की ओर आकर्षित होता है ।**

जेही सुरति तेहै राहि जाइ ।। (पृ. ६६२)

'तुच्छ संगत' अथवा 'कुसंगत' के प्रभाव अधीन तुच्छ रुचियाँ उत्पन्न होती हैं तथा सुरति विषय-विकारों की ओर दौड़ती है । हमारा ध्यान या सुरति बिखर कर **'निर्बल'** हो जाती है तथा हमारा **'ध्यान' किसी एक लक्ष्य पर नहीं टिकता।**

इसी कारण जिज्ञासुओं की यह आम शिकायत होती है कि पाठ करते या सिमरन करते हुए **मन नहीं टिकता, दौड़ता रहता है ।**

इहु मनूआ खिनु न टिकै बहु रंगी
दह दह दिसि चलि चलि हाढे । (पृ १७०)

अंदरि कपटु सदा दुखु है **मनमुख धिआनु न लागै ।।** (पृ८५१)

यदि हमारा **'ध्यान' किसी गलत नुक्ते पर** एकाग्र हो जाये, तब वह **निश्चय** (conviction) **बन जाता है तथा शक्तिशाली रूप धारण कर लेता है, जिसके बहुत भयानक परिणाम निकलते हैं ।**

यहाँ हिटलर (Hitler) तथा चंगेज खान जैसे व्यक्तियों का उदाहरण दिया जा सकता है, जिनकी **गलत धारणाओं की तीव्रता** द्वारा अत्यंत

असह्यनीय तथा अकथनीय अत्याचार हुए हैं तथा वर्तमान समय में भी हो रहे हैं ।

इस लिए **'संगत' अनुसार ही हम 'अच्छा' या 'बुरा' प्रभाव लेते हैं** तथा मन के —

ख्याल
मनोभाव
ध्यान
रुचियाँ
संगत
दिलचस्पी
एकाग्रता
शक्ति

बनती है ।

कबीर मनु पंखी भइओ उडि उडि दह दिस जाइ ।।
जो जैसी संगति मिलै सो तैसो फलु खाइ ।। (पृ. १३६९)

यहां एक और उदाहरण भी ठीक उतरता है —

अफीमची की संगति करते-करते यदि कोई व्यक्ति अफीम खाता रहे तो धीरे-धीरे वह भी अफीमची बन जाता है तथा कुछ समय पश्चात अफीम का **प्रभाव** उसकी रग-रग में **गहरा उतर जाता है** तथा उसके जीवन के **प्रत्येक पक्ष** अर्थात ख्याल, वचन, दृष्टि, विचार, व्यवहार तथा मेल-जोल में **अफीम की 'झलक' दिखाई** देती है । उसके **'व्यक्तित्व'** पर **अफीम** की **'मुहर' लग जाती है** तथा **वह अफीम का रूप** (opium personified) **ही हो जाता है ।** इस दशा में वह अफीम के अवगुणों से अवगत होते हुए भी इस की **गुलामी से छुटकारा नहीं पा सकता । यही 'हाल' शराबियों अन्य नशेड़ियों तथा विषय-विकारियों का होता है ।**

इन उदाहरणों से स्पष्ट होता है कि कुसंगति करते हुए किसी **विशेष 'रुचि' को बार-बार दोहराने से उस रुचि की ओर 'ध्यान' दृढ़ हो जाता है** जिस की गुलामी से छुटकारा अत्यन्त कठिन है ।

उपरोक्त विचारों से सिद्ध होता है कि हमारे **अच्छे या बुरे जीवन का मूल कारण हमारी 'रुचि' या 'ध्यान' ही है ।**

अन्तःकरण में धँसी-बसी 'रुचि' या 'रंगत' शीघ्र **नहीं बदली जा सकती,** क्योकि यह **'रंगत' या 'भड़ास' सहज-स्वभाविक, स्वतः ही अपनी 'झलक' या 'बदबू' का प्रकटाव करती रहती है ।** परन्तु **वर्तमान जीवन के बाहरी तथा ओछे प्रभाव से बचने का प्रयत्न किया जा सकता है ।**

इस लिए यदि हम अपना जीवन अच्छा, सुन्दर, दैवीय तथा सुखदायी बनाना चाहते हैं, तब पहले **बुरी या तुच्छ कुसंगत छोड़नी पड़ेगी,** जिस लिए गुरबाणी यूँ उपदेश करती है —

ते साकत चोर जिना नामु विसारिआ
मन तिन कै निकटि न भिटीऐ ।। (पृ १७०)

साकत संगु न कीजई पिआरे जे का पारि वसाइ ।।
जिसु मिलिऐ हरि विसरै पिआरे सो मुहि कालै उठि जाइ ।।
(पृ. ६४१)

जिन अंदरि निंदा दुसटु है नक वढे नक वढाइआ ।।
महा करूप दुखीऐ सदा काले मुह माइआ ।।
भलके उठि नित पर दरबु हिरहि हरि नामु चुराइआ ।।
हरि जीउ तिन की संगति मत करहु
रखि लेहु हरि राइआ ।। (पृ. १२४४)

कबीर मारी मरउ कुसंग की केले निकटि जु बेरि ।।
उह डूलै उह चीरीऐ साकत संगु न हेरि ।। (पृ. १३६९)

साकत संगु न कीजीऐ जा ते होइ बिनाहु ।। (पृ. १३६९)

कबीर साकत संगु न कीजीऐ दूरहि जाईऐ भागि ।।
बासनु कारो परसीऐ तउ कछु लागै दागु ।। (पृ. १३७१)

इसके विपरीत गुरमुख प्यारों महापुरुषों की संगत अथवा **'साध संगति'** करने की अत्यन्त आवश्यकता है, जिस की गुरबाणी में हमें शिक्षाप्रद प्रेरणा दी गयी है —

मन पिआरिआ जीउ मित्रा **करि संता संगि निवासो ।।**(पृ. ७९)

साधू संगु करहु सभु कोइ ।।
सदा कलिआण फिरि दूखु न होइ ।। (पृ. १९६)

सखी सहेरी संग की सुमति द्रिड़ावउ ।।
सेवहु साधू भाउ करि तउ निधि हरि पावउ ।। (पृ ४००)

साधसंगति कै अंचलि लावहु बिखम नदी जाइ तरणी ।।
(पृ७०२)

संता संगति मिलि रहै ता सचि लगै पिआरु ।। (पृ. ७५६)

साधन का संगु साध सिउ गोसटि
हरि साधन सिउ लिव लाउ ।। (पृ १२०२)

कबीर संगति करीऐ साध की अंति करै निरबाहु ।।(पृ. १३६९)

ज्यों-ज्यों हम उच्च आत्मिक सत् संगति अथवा साध संगति करेगें, त्यों-त्यों हमारे —

विचारों की **रंगत बदलती जायेगी**
मन **निर्मल होता जायेगा**
मन की **सुरति एकाग्र होगी**

'ध्यान' टिकता जायेगा
मन **तुच्छ मानसिक रुझान** से उपर उठता जाएगा
रुचियाँ **बदलती जायेंगी**
निर्णय शक्ति **निर्मल होती जायेगी**
जीवन-दिशा उत्तम होती जायेगी
विवेक बुद्धि प्रज्वलित होगी
'शबद' का ज्ञान होगा
'हुकुम' का ज्ञान होगा
नाम सिमरन दृढ़ हो जायेगा
अनुभव-प्रकाश हो जायेगा ।

उत्तल ताल (convex glass) पर सूर्य की अनेक किरणें पड़ कर शीशे में से गुजरती हुई लाखों किरणें, एकत्रित तथा एकाग्र (condense) **होकर एक शक्तिशाली गाढ़ी-मोटी किरण का रूप धारण कर लेती है ।** इस शक्तिशाली किरण (condensed ray) में सूर्य की **गर्मी की तीक्ष्णता** (intensity of heat) इतनी बढ़ जाती है कि वह **कागज को जला देती है, जब कि साधारण किरणों का कागज पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता ।**

यह दृष्टांत हमारे ख्यालों की किरणों या **'ध्यान'** पर सही उतरता है । ज्यों-ज्यों हमारे **'ध्यान' की किरणें एकत्र तथा एकाग्र होती जाती है, त्यों-त्यों इनकी शक्ति बढ़ती जाती है ।**

यह बात आम मानी जाती है कि तीव्र जलन (intense jealousy) या तुच्छ ख्यालों की 'तीव्रता' द्वारा **'नज़र' लग जाती है । तुच्छ ख्यालों के 'ध्यान' की एकाग्रता तथा अभ्यास** (concentration and practice) **से उत्पन्न हुई शक्ति के प्रकटाव को 'नज़र' या 'श्राप' कहा जाता है ।**

यदि तुच्छ ख्यालों में से उत्पन्न मानसिक **'ध्यान-शक्ति' के चमत्कारों को माना जा सकता है, तब उत्तम ख्यालों की एकाग्रता से उत्पन्न चमत्कार, वर, करामात, रिद्धि-सिद्धियों को भी माना जा सकता है, क्योकि यह सारे चमत्कार भी मन की 'एकाग्रता' या 'ध्यान' की तीक्ष्णता के ही 'परिणाम' हैं ।**

मानसिक शक्ति (mind power) की श्रेणी में निम्नलिखित मानसिक करतब प्रचलित हैं —

रिद्धि-सिद्धियाँ
नाटक-चेटक
वाक्-सिद्धि
भविष्य वाणी
अन्तर्यामिता
हिप्नोटिज्म (hypnotism)
मेस्मेरिस्म (Mesmerism)
भूतों के जादू
मदारियों के तमाशे आदि ।

यह 'मानसिक शक्तियाँ' हमारे तीक्ष्ण ध्यान तथा एकाग्रता का ही परिणाम है ।

स्वामी विवेकानन्द जी (Swami Vivekanand) ने अपने अमरीका के किसी व्याख्यान में इस मानसिक शक्ति (mind power) के विषय में सुन्दर प्रकाश डाला है —

जब वे कॉलिज में पढ़ते थे, कुछ अन्य मनचले विद्यार्थियों को साथ लेकर दक्षिणी भारत में किसी ब्राह्मण के पास गये । जिस के विषय में उन्होंने सुना था कि वह बहुत अनोखे **चमत्कार दिखाता है ।** जब उसे कोई चमत्कार दिखाने के लिए कहा, तब ब्राह्मण ने उन्हें कहा कि

अपने-अपने **मन-भावन 'फल' का गुप्त चिंतन करके कागज** पर लिखकर अपनी-अपनी जेब में रख लें। फिर उन्हें आँखें बन्द करके बैठने के लिए कहा तथा स्वयं भी समाधि लगा कर बैठ गया। कुछ समय पश्चात आँखे खोलने के लिए कहा। तब विद्यार्थी यह देखकर चकित हुए कि उनके सामने कई प्रकार के **'फलों' का ढेर लगा हुआ था।**

ब्राह्मण ने कहा कि आप अपने-अपने **सोचे हुए फल** चुन कर खाओ, परन्तु विद्यार्थी **'जादू के फल'** खाने से झिझकते थे। ब्राह्मण ने स्वयं फल खाकर उन की सन्तुष्टि करवाई कि **ये प्राकृतिक ताजे फल हैं** तथा हानिकारक नहीं है। विद्यार्थियों ने जब वे फल खा कर देखे, तब उन में प्राकृतिक महक, स्वाद तथा रस भरा हुआ था। विद्यार्थी और भी आश्चर्यचकित हुए जब उन्होंने देखा कि **ये फल बे मौसम तथा विदेशी** (out-of-season and of foreign origin) थे तथा बिल्कुल **ताजे हरी पत्तियों व टहनियों वाले थे।**

ब्राह्मण ने उन्हे समझाया कि यह कोई **धार्मिक या आत्मिक चमत्कार नहीं है,** अपितु केवल **'मानसिक एकाग्रता' का परिणाम है।** मन को एकाग्र करने की साधना से इस प्रकार के **'मानसिक शक्ति'** के चमत्कार हो सकते हैं।

हमारे ख्यालों की अति सूक्ष्म तथा तीक्ष्ण किरणें जब एकाग्र हो कर शक्तिशाली बनती हैं, तब समस्त संसार में फैल जाती हैं तथा समस्त **'जगत मन' अथवा वातावरण पर तीव्र प्रभाव डालती हैं।**

इस प्रकार **'ध्यान' द्वारा दृढ़ किए हुए भाँति-भाँति के अत्यन्त सूक्ष्म ख्यालों का सामूहिक प्रभाव** (cumulative effect), **रंगत या भड़ास धीरे-धीरे ब्रह्मांड** (ether) **के वातावरण** (environment) पर पड़ रहा है तथा उसे **'गन्दा' कर रहा है।**

दूसरे शब्दों में समस्त जनता के ख्यालों का **अच्छा -बुरा असर ब्रह्मांड के सूक्ष्म कम्प्यूटर** (computer) में अलग -अलग श्रेणी (cycles and wavelength) पर प्रतिक्षण, प्रति फल **जमा होता रहता है** तथा शक्तिशाली (powerful) बन कर समस्त 'साँसारिक वातावरण' द्वारा, उन्हीं की श्रेणी (cycles and wavelength) के **अन्य मनों पर अच्छा या बुरा प्रभाव डालता है ।**

इसका अर्थ यह हुआ कि हमारे छोटे से छोटे ख्याल का अच्छा या बुरा **प्रभाव** —

पहले **हमारे मन** पर पड़ता है ।

फिर **ब्रह्मांड के सूक्ष्म वातावरण** को बदलता तथा गन्दा करता है । ब्रह्मांड के 'वातावरण' में उसी प्रकार के **विशेष ख्यालों से मिल कर** शक्तिशाली बन जाता है ।

यह अच्छे -बुरे 'शक्तिशाली' ख्याल पुनः हमारे मन पर जोरदार असर डालते हैं।

इस प्रकार हम अपने ही ख्यालों के **जहरीले भँवर** (vicious circle) में फँसे हुए हैं, जिस में से अपने **आप निकलना असम्भव है ।**

इस प्रकार हमारे मन के **ख्यालों तथा कर्मों का 'प्रभाव' समस्त 'जनता' पर पड़ता है, तथा जनता के ख्यालों का प्रभाव सृष्टि के वातावरण द्वारा पलट कर हमारे मन पर पड़ता है ।**

हम अपने चारों ओर के वातावरण (environment) को अच्छा या बुरा बनाने के स्वयं जिम्मेवार हैं तथा उस की **अच्छी -बुरी भड़ास** (ecology) के **भागीदार होते हैं ।**

वर्तमान समय में घोर कलयुग का बोल -बाला है । समस्त सृष्टि का वातावरण भी अत्यन्त मलिन तथा खतरनाक हो रहा है । **यह घोर**

कलयुग का वातावरण हमारे ही मलिन ख्यालों के तीक्ष्ण ध्यान तथा एकाग्रता द्वारा लगातार अभ्यास का ही सामूहिक परिणाम है। इसके फलस्वरूप सामाजिक पतन (social degeneration) इस सीमा तक बढ़ गया है कि हमारे पवित्र **धार्मिक स्थान भी इस की लपेट से बच नहीं सके ।**

दुखदायी बात तो यह है कि जिन पवित्र धार्मिक स्थानों से **हमें शान्ति, सुख तथा भक्ति - भावना मिलनी थी तथा मायिकी ग्लानि से बचाना था, वह स्वयं —**

कर्म-काण्ड
ईर्ष्या-द्वेष
वैर-विरोध
लड़ाई-झगड़े
लोभ
पाखण्ड
राजनीति
कूड़-क्रिया

के अड्डे बन गये हैं ।
हाय ! सृष्टि को कौन बचाये ?

बाहर की अगनि जयों बुझै जल सरिता कै
नाउ मै जौ आग लागै कैसे कै बुझाईऐ ।
बाहर सैं भाग ओट लीजीअत कोट गड़
गड़ मैं जो लूट लीजै कहो कत जाईऐ ।
चोरन कै त्रास जाए सरन नरिंद गहै
मारै महीपति जीउ कैसे कै बचाईऐ ।

माया डर डरपत हार गुरदवारे जावै

तहां जौ विआपै माया कहां ठहिराईऐ ।

(क. भा. गु. ५४४)

यद्यपि हम सभी इस सामाजिक तथा धार्मिक पतन से तंग आ कर अन्दर ही अन्दर दुखी हो रहे हैं — परन्तु इस के सुधार के लिए कोई ठोस 'करागर' कदम नहीं उठाया जा रहा ।

याद रखने वाली बात है कि इस **'ग्लानि' का 'सुधार' पहले अपने-अपने मन के ख्यालों से ही प्रारम्भ हो सकता है । अन्यथा हमारे फोकट प्रचार का कोई प्रभाव नहीं हो सकता ।**

हमारी वर्तमान फोकट 'प्रचार-प्रणाली' के परिणामों से स्पष्ट हो रहा है कि बावजूद —

अनगिनत पाठ-पूजा के
योग साधना के
अनगिनत धार्मिक कर्म-काण्डों के
अनगिनत धर्म-स्थानों के
अनेक धार्मिक ग्रन्थों के उपदेशों के
अत्यधिक धर्म प्रचार के
नवीन प्रचार के साधनों के

हमारी मानसिक तथा धार्मिक 'ग्लानि' बढ़ती जा रही है ।

यद्यपि इस 'ग्लानि' के विषय में हम शिकायतें तथा **नुक्ताचीनी तो करते रहते हैं — परन्तु स्वयं अपनी ग्लानि वाली 'जीवन-प्रणाली' को छोड़ नहीं सकते ।**

हम जीवन के हर पक्ष में इस **ग्लानि का आसरा या मार्गदर्शन लेते है** तथा अपनी उचित-अनुचित गर्जों की पूर्ति के लिए **तुच्छ साधनों का**

प्रयोग करने से भी संकोच नहीं करते ।

इस ग्लानि के जहरीले मानसिक 'रोग' बढ़कर इतने शक्तिशाली हो गये हैं कि तपैदिक की भाँति ये रोग हमारे तन, मन, बुद्धि तथा अन्तःकरण में धँस -बस -समा गये हैं तथा नित्यप्रति और हानिकारक तथा खतरनाक हो रहे हैं ।

जब हमारे विचारों की एकाग्रता अथवा **'ध्यान'** का प्रभाव इतना गहरा तथा खतरनाक हो सकता है, तब हमें अपने **ख्यालों अथवा 'ध्यान' पर पहरा देने की अति आवश्यकता है ।** परन्तु हम अपने -अपने ख्यालों तथा कर्मों के परिणाम से बेपरवाह तथा लापरवाह होकर पुरानी आदतों अनुसार ही जीवन व्यतीत करते हैं ।

हम घरों, गलियों, मुहल्लों, शहरों तथा चारों ओर के 'गन्दे' वायु मण्डल (ecological pollution) के विषय में तो बहुत वाद -विवाद करते हैं तथा हाय -तौबा करते हैं — परन्तु अपनी **अन्दर की 'मानसिक ग्लानि' के भयानक परिणाम से अनजान, बे -खबर, बेपरवाह तथा लापरवाह हो रहे हैं ।**

समझने वाली **महत्वपूर्ण बात** यह है कि **'शारीरिक रोग'** तो मृत्यु के साथ ही समाप्त हो जाते हैं परन्तु **अन्तःकरण में स्वयं आमंत्रित 'मानसिक रोग' तो अगले जन्म में भी जीव के साथ ही जाते हैं ।**

संसार में पहले ही **मानसिक ग्लानि परिपूर्ण हो कर 'छलक' रही है ।** यदि इस मानसिक ग्लानि के जहर को हम कम नहीं कर सकते तो **बढ़ाने का भी हमें कोई अधिकार नहीं ।**

समस्त विश्व में जो अशान्ति, स्वार्थ, अहंकार, ईर्ष्या, द्वेष, वैर -विरोध, घृणा, लड़ाईयाँ, झगड़े, अत्याचार तथा जुल्म का बोल -बाला है, इन सब का **मूल** कारण या बीज हमारे मलिन ख्यालों की एकाग्रता अथवा **'ध्यान' द्वारा अभ्यास करना ही है ।** जिसका सामूहिक प्रभाव या **'रंगत'** सांसारिक जीवन के हर पक्ष में **झलक रहा है ।**

ईश्वर ने अपनी अंश, 'मनुष्य' के लिए स्वर्ग रूप सृष्टि की रचना की थी तथा हर प्रकार के सुख -आराम प्रदान किये थे। परन्तु हमने अपने तुच्छ ख्यालों तथा **तुच्छ रुचियों के लगातार 'ध्यान' अथवा एकाग्रता द्वारा इस 'स्वर्ग -रूपी' सृष्टि को 'नरक -रूप' बना दिया है।**

इस प्रकार हमने अपने **पैरों पर स्वयं कुल्हाड़ा मारा है,** तथा स्वयं नरक भोगते हुए दुखी हो रहे हैं तथा दूसरों को भी दुखी कर रहे हैं।

कबीर दीनु गवाइआ दुनी सिउ दुनी न चाली साथि ।।
पाइ कुहाड़ा मारिआ गाफलि अपुनै हाथि ।। (पृ. १३६५)

किसी विचार को **'ख्याल'** कहा जाता है। किसी ख्याल पर गौर किया जाये तो **'ध्यान'** बन जाता है। 'रुचि' या दिलचस्पी अनुसार **'ध्यान' तीव्र हो जाता है। 'तीव्र ध्यान'** में से तंरगें उत्पन्न होती हैं। दिलचस्पी तथा रुचियों अनुसार **कर्मों की प्रेरणा** होती है। कर्मों के अभ्यास द्वारा **'आदतें' बनती हैं।** आदतों के अभ्यास द्वारा **रुचियाँ** बनती हैं। गहन रुचियों वाले ख्यालों से हमारा 'स्वभाव' बनता है। 'स्वभाव' अनुसार हमारा **'चाल -चलन'** बनता है। **'चाल -चलन'** अनुसार हमारा **'जीवन'** बनता है। **'जीवन' अनुसार हमारा 'भाग्य' बनता हैं।**

इस प्रकार **हम कर्म -बद्ध होकर सहज -स्वभाविक 'बेध्यान' ही कर्म करते रहते हैं तथा परिणाम भोगते हैं।**

इन सभी मानसिक अवस्थाओं का मूल कारण या 'बीज' हमारा **'ध्यान' अथवा एकाग्रता ही है।**

उपरोक्त विचार से सिद्ध हुआ कि हमारे कर्म, आदतें, स्वभाव, जीवन तथा भाग्य हमारे अच्छे या बुरे **ख्यालों तथा 'ध्यान' पर निर्भर हैं।**

जेहा बीजै सो लुणै करमा संदड़ा खेतु ।। (पृ. १३४)

जो मै कीआ से मै पाइआ दोसु न दीजै अवर जना ।। (पृ. ४३३)

बीजै बिखु मंगै अंम्रितु वेखहु एहु निआउ ।। (पृ. ४७४)

फरीदा लोड़ै दाख बिजउरीआं किकरि बीजै जटु ।।
हंढै उन कताइदा पैधा लोड़ै पटु ।। (पृ. १३७९)

यदि हमारे ख्याल अच्छे, उत्तम तथा दैवीय हों, तब ही हमारा जीवन ऊँचा, अच्छा, सुन्दर तथा दैवीय बन सकता है ।

बुरी तथा तुच्छ रुचियों वाले ख्यालों से **असुरी अवगुण उत्पन्न होते हैं** तथा हम लोभ -लालच, वैर -विरोध, चिंता -फिकर तथा अंहम् -ग्रसित **'ग्लानि' वाला** जीवन भोगते तथा दुखी होते हैं ।

पलचि पलचि सगली मुई झूठै धंधै मोहु ।। (पृ. १३३)

अपने जीवन को बदलने के लिए सर्वप्रथम हमारी अन्तर -आत्मा में, **अच्छे -बुरे की पहचान या 'निर्णय' करने की शक्ति या विवेक -बुद्धि जरूरी है ।** परन्तु अफसोस की बात है कि हमारी 'बुद्धि' इतनी मलिन हो गयी है कि हम **अच्छाई तथा बुराई का 'निर्णय करने में** भी असमर्थ हो गये हैं । अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए हम अपने **'मलिन कर्मों' को 'उचित' माने हुए हैं ।**

सारी उम्र 'चमड़े' का काम करने वाले चमड़े की दुर्गन्ध सूंघने के आदी होते जाते हैं तथा उनकी **'सूघने की शक्ति'** कम हो जाती है या कतई नहीं रहती ।

इसी प्रकार **अनेक जन्मों से 'मायिकी ग्लानि' में विचरण करते हुए 'जीव' की अच्छे -बुरे की पहचान अथवा निर्णय -शक्ति भी 'धुँधली' हो जाती है** या काम नहीं करती तथा वह **अनुचित बातों को भी उचित समझकर तुच्छ ग्लानिपूर्ण ख्यालों तथा कर्मों में गलतान रहते हैं ।**

यदि कहीं 'मृत शरीर' पड़ा हो तब हम उसकी हानिकारक **'दुर्गन्ध' से बचने के लिए दूसरी ओर मुँह फेर लेते हैं या दूर हो जाते हैं ।**

इसी प्रकार यदि **'मलिन-ख्यालों' की ग्लानि का ज्ञान हो जाए तब** हमें उन तुच्छ ख्यालों की ओर से **'ध्यान' का रुख दूसरी ओर अथवा उच्च दैवीय ख्यालों की ओर मोड़ने का प्रयास करना चाहिए ।** यदि उसी समय **तत्काल** उस मलिन ख्याल का **रुख या 'ध्यान' बदला न गया** तो वह मलिन ख्याल हमारे **ध्यान द्वारा प्रवृत होकर हमारे मन पर अपनी मलिन रंगत** चढ़ा देगा ।

यह **'निर्णय शक्ति' या 'विवेक-बुद्धि'** प्राप्त करने कि लिए गुरबाणी हमारा यूँ मार्गदर्शन तथा सहायता करती है —

साध संगति मिलि बुधि बिबेक ।। (पृ ३७७)

सतसंगति मिलि बिबेक बुधि होई ।। (पृ. ४८१)

साधसंगि नानक बुधि पाई हरि कीरतनु आधारों ।। (पृ. ४९८)

नदरि करे ता सतिगुरु मेले अनदिनु बिबेक बुधि बिचरै ।।(पृ. ६९०)

बिबेक बुधि सतिगुर ते पाई
गुर गिआनु गुरू प्रभ केरा ।। (पृ. ७११)

दुरमति मैलु गई सभ नीकलि
सतसंगति मिलि बुधि पाई ।। (पृ ८८०-८१)

भगत दइआ ते बुधि परगासै दुरमति दूरख तजावना ।।(पृ. १०१८)

अचरु चरै बिबेक बुधि पाए पुरखै पुरखु मिलाइ ।। (पृ. १२७६)

सतसंगति मिलि मति बुधि पाई हउ छूटे ममता जाल ।।
(पृ. १३३५)

सतिगुर की सेवै लगिआ भउजलु तरै संसारु ।।
मन चिंदिआ फलु पाइसी अंतरि बिबेक बीचारु ।। (पृ. १४२२)

इस **'निर्णय शक्ति' के बिना,** हम अपनी **पुरानी गलत 'सोच - प्रणाली' अनुसार ही कर्म करते रहेंगे तथा परिणाम भोगते रहेगें ।**

मन को 'मारा' नहीं जा सकता — अपितु मन को 'दैवीय' गुणों की 'कलम' लगायी जा सकती है — जिस से हमारे ख्याल तथा कर्म अच्छे बन सकते हैं ।

यह 'दैवीय कलम' केवल बख्शे हुए 'गुरमुख जन' महापुरुषों की संगति अथवा **'साध संगति द्वारा ही लग सकती है जिस से 'ध्यान' टिकता है तथा 'मन' वश में आता है —**

साध कै संगि न कतहुं धावै ।।
साधसंगि असथिति मनु पावै ।। (पृ. २७१)

धधा धावत तउ मिटै संतसंगि होइ बासु ।। (पृ. २५७)

सतसंगति साध पाई वडभागी
मनु चलतौ भइओ अरूड़ा ।। (पृ. ६९८)

बिस्राम पाए मिलि साधसंगि ता ते बहुड़ि न धाउ ।। (पृ. ८१८)

जा कउ क्रिपा करी जगदीसुरि
तिनि साधसंगि मनु जिता ।। (पृ. ११९७)

मनूआ चलै चलै बहु बहु बिधि
मिलि साधू वसगति करिआ ।। (पृ. १२९४)

मनु असाधु न साधीऐ गुरमुखि सुख फलु साधि सधाइआ ।
साध संगति मिलि मन वसि आइआ । (वा. भा. गु. २९/९)

(क्रमश .....)